RNI No. 26281/74 रजि. नं. पी.बी./जे.एल-011/2015-17

ओ३म्
कृण्वन्तो विश्वमार्यम्
साप्ताहिक
आर्य मर्यादा
आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का प्रमुख पत्र

वर्षः 74, अंक : 38 एक प्रति 2 : रुपये
रविवार 10 दिसम्बर, 2017
विक्रमी सम्वत् 2074, सृष्टि सम्वत्
1960853118 दयानन्दाब्द : 194 वार्षिक
शुल्क : 100 रुपये
आजीवन शुल्क : 1000 रुपये
दूरभाष : 0181-2292926, 5062726
E-mail: apspunjab2010@gmail.com,
www.aryapratinidhisabha.org

वर्ष-74, अंक : 38, 7-10 दिसम्बर 2017 तदनुसार 25 मार्गशीर्ष सम्वत् 2074 मूल्य 2 रु०, वार्षिक 100 रु० आजीवन 1000 रु०

जीव का लक्ष्य महान् संग्राम

लेo-स्वामी वेदानन्द (दयानन्द) तीर्थ

स वावशान इह पाहि सोमं मरुद्भिरिन्द्र सखिभिः सुतं नः।
जातं यत्त्वा परि देवा अभूषन्महे भराय पुरुहूत विश्वे।।

-ऋ० ३।५१।८

शब्दार्थ-हे इन्द्र = ऐश्वर्याभिलाषी जीवात्मन्। **सः** = ऐसा तू **इह** = इस संसार में **वावशानः** = निरन्तर कान्तिमान् होता हुआ, अपने **सखिभिः** = मित्र **मरुद्भिः** = प्राणों के साथ **नः** = हमारे **सुतम्** = निष्पादित **सोमम्** = सोम की **पाहि** = रक्षा कर, **यत्** = क्योंकि हे **पुरुहूत** = अनेक मनुष्यों से स्पर्धनीय! **विश्वे+देवाः** = सब देव **जातं+त्वा** = प्रकट हुए तुझको **महे+भराय** = महान् संग्राम के लिए **परि+अभूषन्** = सब ओर से अलंकृत करते हैं।

व्याख्या-यह मन्त्र जीवन को संग्राम बताता है। संग्राम में विजय पाने के लिए मरने-मारने में तत्पर मित्रों की अत्यन्त आवश्यकता होती है। जीव को ऐसे संग्राम में जूझना है, जिसमें उसे आक्रमण की अपेक्षा रक्षा-कार्य अधिक करना है। उस अवस्था में तो मर मिटने वाले मित्रों की और भी अधिक आवश्यकता है। जीव को भगवान् ने ऐसे साथी दिये हैं जो सदा इसके सङ्ग रहते हैं, मुक्ति होने तक साथ बने रहते हैं। वे हैं मरुत्= प्राण। प्राण आत्मा के साथ सदा बने रहते हैं। इन प्राणों को अपना सखा बनाना आत्मा का कार्य है। इनको सखा बनाकर प्राप्त की रक्षा करना और अप्राप्त को प्राप्त करना जीव का कर्त्तव्य है। जीव के सामने एक महान् संग्राम है। भगवान् ने इस संग्राम के लिए इसके चारों ओर देवों को खड़ा कर दिया है। जीवन-संग्राम में ये देव इसके सहायक हैं। इसके सखा प्राणों ने इसके लिए ब्रह्मामृत रस तैयार किया है। उसकी यदि यह रक्षा कर ले, तो अपने साथियों के सहयोग से रक्षित सोम का पान करने से यह अमृत हो जाएगा, अन्यथा जन्म-मरण का जञ्जाल सिर पर है ही।

ब्राह्मणग्रन्थों तथा उपनिषदों में इस जीवन-संग्राम का अनेक बार, विविध प्रकार से वर्णन हुआ है। वहाँ इस संग्राम को देवासुर-संग्राम कहा गया है। देवों और असुरों का सदा ही युद्ध ठना रहता है। अनेक बार ऐसा प्रतीत होता है कि देव हार जाएँगे, किन्तु अन्त में देवों की ही विजय होती है। होनी ही चाहिए क्योंकि देव सत्यपक्षावलम्बी का नाम है। संसार का यह नैसर्गिक नियम है कि **'सत्यमेव जयते नानृतम्'** = सदा सत्य की विजय होती है, न कि झूठ की और **'सत्यमेव देवाः'** = (शत० १।१।१।४) = देव सत्यस्वरूप ही होते हैं।

ब्राह्मणग्रन्थों, उपनिषदों तथा अन्य आर्षग्रन्थों में जहाँ-जहाँ भी देवासुर-संग्राम की चर्चा है, वहाँ सब जगह यह भी लिखा है कि देवों ने **विष्णु को आगे करके** विजय पाया। इन्द्रसमेत देव विष्णु के पास जाते हैं। सचमुच विष्णु= परमदेव भगवान् [**विष्णुर्वै देवानां परमः' (शत०)** = विष्णु सब देवों में से श्रेष्ठ हैं] के सहयोग के बिना किसी शुभ कार्य में सिद्धि प्राप्त नहीं हो सकती। इस तत्त्व को देवस्वभाव मनुष्य सदा सामने रखते हैं। जीव = इन्द्र देवराज हैं, असुरों = पापभावों से इसे युद्ध करना है। निःसन्देह देव-दिव्यभाव इसके सहायक हैं, किन्तु जब तक यह परमदेव की सहायता प्राप्त नहीं करता, तब तक विजय सन्दिग्ध है।

(स्वाध्याय संदोह से साभार)

इन्द्रो दिव इन्द्र ईशे पृथिव्या इन्द्रो अपामिन्द्र इत् पर्वतानाम्।
इन्द्रो वृधामिन्द्र इन्मेधिराणामिन्द्रः क्षेमे योगे हव्य इन्द्रः।।

-ऋ० १०.८९.१०

भावार्थ-वह सर्वशक्तिमान् परमात्मा द्युलोक पृथिवी लोक समुद्रादि जल और सम्पूर्ण मेघों पर शासन कर रहा है। सब उन्नति और उन्नति चाहने वाले मेधावियों पर भी उसी इन्द्र का शासन है। अपनी सब प्रकार की उन्नति और योग क्षेम के लिए हम सब को उसी दयालु पिता की प्रार्थना उपासना करनी चाहिये।

यो अर्यो मर्तभोजनं पराददाति दाशुषे।
इन्द्रो अस्मभ्यं शिक्षतु विभजा भूरि ते वसु भक्षीय तव राधसः।।

-ऋ० १.८१.६

भावार्थ-यदि परमेश्वर इस जगत् को रच और धारण कर अपने जीवों को अनेक पदार्थ न देता तो किसी को कुछ भी भोग सामग्री प्राप्त न हो सकती। जो यह परमात्मा वेद द्वारा मनुष्यों को शिक्षा भी न करता तो किसी को विद्या का लेश भी न प्राप्त होता। इसलिए सब संसार के पदार्थो और विद्या, बुद्धि आदि सब गुण प्रभु के ही दिए हुए हैं।

इन्द्रं मित्रं वरुणमग्निमाहुरथो दिव्यः स सुपर्णो गरुत्मान्।
एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्त्यग्निं यमं मातरिश्वानमाहुः।।

-ऋ० १.१६४.४६

भावार्थ-एक परमात्मा के अनेक सार्थक नाम हैं। जैसे इन्द्र, मित्र, वरुण, अग्नि, दिव्य, सुपर्ण, गरुत्मान्, यम, मातरिश्वा, इस मन्त्र में कहे गए हैं, और अन्य अनेक मन्त्रों में भी प्रभु के अनेक नाम वर्णित हैं। इन नामों से एक परमात्मा का ही उपदेश है। अनेक देवी देवताओं की उपासना का उपदेश वेदों में नहीं है। स्वार्थी लोगों ने ही अनेक देवताओं की उपासना को अपनी स्वार्थ-सिद्धि के लिए कहा है। वेदों में तो इसका नाम निशान नहीं, वेदों में एक परमात्मा की उपासना का ही विधान है।

क्या वैदिक संस्कृति अनन्य थी?

ले.-शिवनारायण उपाध्याय, 73 शास्त्री नगर दादाबाड़ी, कोटा

केम्ब्रिज विश्वविद्यालय में असैनिक भारत अधिकारियों के प्रशिक्षण के मध्य सन् 1882 ई. में एफ. मैक्स मूलर द्वारा दिया गया यह चतुर्थ व्याख्यान था। व्याख्यान में उन्होंने यह बताने का सफल प्रयास किया है कि वैदिक संस्कृति विश्व की प्राचीनतम संस्कृति है और इसमें किसी अन्य संस्कृति से कुछ ग्रहण नहीं किया गया है। वे कहते हैं कि विवाद सदैव अच्छाई की जगह कष्ट अधिक पहुंचाता है, यह सबसे नित्कृष्ट चतुराई को उत्साहित करता है, लोकप्रियता प्राप्त करने की बेईमानी के विषय में तो कुछ कहना ही नहीं और अन्त में यह विश्व को अधिक अव्यवस्थित छोड़ कर जाता है। ऐसा कहा जाता है कि कोई भी चतुर वकील इस बात को कहने से नहीं सहमेगा, अंग्रेज न्यायाधीश लोग मुझे क्षमा करें, कि पृथ्वी विश्व का केन्द्र है और आज के युग में यह भी असम्भव नहीं है कि वह गैलिलियों के विरूद्ध न्याय प्राप्त कर ले जिसे कि आज हजारों लाखों लोग स्वीकार करते हैं और उसके विरूद्ध एक प्रमाण भी नहीं खोज पाते हैं। मैं यह स्वीकार करने को भी तैयार हूँ कि जिन लोगों ने समाज में सबसे अच्छा काम किया है और जिन्होंने ज्ञान की वृद्धि हेतु बहुत कुछ दिया है और सत्यता के विकास में अपना योगदान किया है, उन्होंने कभी भी अपना समय विवादों में नहीं खोया है परन्तु वे लगातार अपने मार्ग पर सीधे चलते रहे हैं उन्होंने इस बात की कभी परवाह नहीं की है कि कौन दाएं से उनकी प्रशंसा कर रहा है और कौन बाएं की तरफ से उनकी निन्दा कर रहा है। यह सब पूर्ण ठीक है फिर भी मैं अनुभव करता हूँ कि मैं एक पूरा व्याख्यान इस बात पर देने से नहीं बच सकता कि मेरे व्याख्यान के दृष्टिकोण पर कुछ एतराज किये गये हैं जिनको नजर अन्दाज किया जा सकता है। यदि आलोचनाएं और केवल आलोचना के लिए यदि वे निम्नतर भावना से उत्तेजित नहीं है तो/परन्तु कुछ संदेह होते हैं कुछ कठिनाईयाँ होती हैं जो स्वाभाविक रूप से अपने को दोषों के रूप में प्रस्तुत करती हैं और जो इस बात की अधिकारी होती हैं कि उन्हें सुना जावे और जिनका दूर किया जाना सत्यता के मजबूत स्थान तक की पहुँच को सरल बनाता है। यह सिद्धान्त भारतीय साहित्य के अतिरिक्त कहीं पर भी कार्य करता हुआ नहीं देखा जाता है। अतः वेद के पृष्ठ खोलने से पूर्व और आपको प्राचीन भारत निवासियों के काव्य, धर्म और दर्शन के विषय में बताने के पूर्व, मैं सोचता हूँ कि यह सही और आवश्यक होगा कि पहले हम कुछ बिन्दु निर्धारित कर लें जिनके अभाव में यह असम्भव होगा कि हम वैदिक काव्य का सही मूल्यांकन कर सकें, उसकी सराहना कर सकें और उनके महत्व का आज भी वैदिक ऋषियों से इतना दूर रह कर भी ऐतिहासिक दृष्टि से उचित मूल्यांकन कर सकें। पहला बिन्दु शुद्ध रूप में प्रारम्भिक है कि हिन्दु लोग प्राचीन काल में, और वर्तमान काल में भी एक राष्ट्र है जो इस योग्य है कि हम उनमें दिलचस्पी और सहानुभूति रखें, वे हमारे विश्वास के पात्र भी हैं और किसी भी तरह के उन पर जो व्यर्थ के आरोप लगाये जाते हैं, जो कहा जाता है कि स्वभाव से ही सत्य की परवाह नहीं करते के अपराधी नहीं है।

दूसरा बिन्दु यह है कि भारत के प्राचीन साहित्य को केवल यह न माना जावे कि वह तो पूर्वीय विद्वानों का केवल मनोरंजन करने वाला है जो पीढ़ी दर पीढ़ी क्रम से चला आ रहा है परन्तु यह स्वीकार करें कि अपनी भाषा संस्कृत के साथ और अपने प्राचीन सब ग्रन्थों के साथ, वेद हमें ऐसी शिक्षा दे सकता है जैसी शिक्षा दूसरा कोई और नहीं दे सकता है। हमारी स्वयं की भाषा की उत्पत्ति के सम्बन्ध में, हमारी अपनी मान्यताओं की उत्पत्ति, और उन सब स्वाभाविक गुणों की उत्पत्ति जिनको सभ्यता के नाम से पुकारा जाता है, कम से कम आर्य जाति की सभ्यता जिसमें हम सम्पूर्ण संसार के सबसे महान् राष्ट्र हिन्दू पारसी, यूनानी, रोमन्स, स्लेब, केल्ट और अन्त में सबसे कम नहीं ट्यूटन्स सम्मिलित हैं। एक व्यक्ति बिना भूतत्व जाने भी एक अच्छा किसान हो सकता है और एक व्यक्ति बिना इतिहास जाने भी एक भला सभ्य नागरिक बन सकता है।

तीसरा बिन्दु है कि आपको यह समझाने के पश्चात् कि भारत का प्राचीन साहित्य, वास्तव में उस देश का प्राचीन साहित्य, मेरा मतलब है वेद कालीन साहित्य से, वह हमारा सावधानी पूर्वक ध्यान, केवल प्राच्य विद्या विद्वानों का ध्यान ही नहीं, परन्तु प्रत्येक शिक्षित पुरूष और स्त्री का ध्यान, जो यह जानना चाहता हैं कि हम किस प्रकार, हम इंग्लैण्ड के निवासी भी और हमारी इस उन्नीसवीं सदी में भी, हम वह कैसे बने जो आज हैं, क्यों आकर्षित करता है? मैंने आपको वह अन्तर समझाने का भी प्रयत्न किया है, स्वाभाविक तथा आवश्यक अन्तर, ऐसी भिन्न जलवायु में मानव जीवन के विकास के सम्बन्ध में, उसके चारित्रिक विकास के सम्बन्ध में, जैसा कि भारत तथा यूरोप में है और यह स्वीकार करते हुये कि हिन्दू लोग उन कई गुणों में तथा प्रायोगिक सफलता में जिनको कि हम लोग बहुत महत्व देते हैं हमसे कमजोर हैं उनमें कमी है। मैं चाहता था कि एक दूसरे वातावरण की तरफ भी इशारा करूँ, एक दूसरे क्षेत्र की तरफ इशारा करूँ जिसमें हिन्दू लोग हमसे बहुत आगे हैं, शानदार स्थिति में हैं। एक शानदार बौद्धिक कार्य ध्यान और अति उत्तम योग्य विद्या और यहाँ हम उनसे जीवन के वे पाठ पढ़ सकते हैं जिनकी हम उपेक्षा करते रहने के, निन्दा करने के आदि हो गये हैं।

चौथा बिन्दु है डरते हुए कि मैंने आपसे बहुत ऊँची आशाएं प्राचीन ज्ञान, विज्ञान व बुद्धि के विषय में भारत के वेद के धर्म और दर्शन के विषय में, उत्पन्न कर दी हैं।

मैंने यह अपना कर्त्तव्य अनुभव किया कि यद्यपि एक अर्थ में बहुत प्रारम्भिक परन्तु हमें वेद के धर्म को ऐसा नहीं मानना चाहिए कि जैसे अण्डा फूट कर अभी जीव बाहर निकला है और इस विचित्र संसार को पहली बार आश्चर्य जनक दृष्टि से देख रहा हो। वेदों को प्रारम्भिक तो इसलिए ही कहा जाता है कि उनसे प्राचीन कोई साहित्य नहीं है। परन्तु भाषा नीति, धर्म और दर्शन शास्त्र जो हमें वेद से प्राप्त होते हैं वे एक भूत-काल का ऐसा खोल देते हैं। जिसे कि कोई वर्षों के समय में भी नहीं माप सकता है। साधारण प्राकृतिक बालक के विचारों के समान विचार भी उसमें एक तरफ होते हैं परन्तु कई ऐसे विचार भी हैं जो हमें भी वर्तमान कालिक लगते हैं। परन्तु वह सब किसी भी प्राचीन साहित्य से पुरातन हैं और हमें विश्वनीय समाचार उस युग के देते हैं, मानवीय विचारों के इतिहास की जिसके विषय में वेदों की खोज के पूर्व कुछ भी नहीं जाना जाता था।

फिर भी हमारा मार्ग अभी साफ नहीं है। वेद के विरूद्ध दूसरे आपेक्ष उठाये जाते है जिन्हें ऐतिहासिक कह सकते हैं। उनमें कुछ महत्वपूर्ण हैं और कई बार मैंने स्वयं उनका सामना किया है। दूसरे कुछ आपेक्ष कम से कम कुछ शिक्षाप्रद भी हैं और जिस नींव पर हम खड़े हैं उसकी परीक्षा करने का एक अवसर देते हैं।

वेद को एक ऐतिहासिक दस्तावेज मानने के विरूद्ध एक आपेक्ष है कि वैदिक चरित्र वास्तव में एक राष्ट्रीय चरित्र नहीं बताता है और भारत की सम्पूर्ण जनता के विचारों का प्रतिनिधित्व नहीं करता है केवल एक अल्पसंख्यक ब्राह्मण नामक जाति की, और वह भी पूरी ब्राह्मण जाति की नहीं परन्तु केवल उनके भी अल्पसंख्यक वर्ग की पुरोहित वर्ग की भावना का प्रतिनिधित्व करता है।

वैदिक मंत्र केवल कुछ लोगों का प्रतिनिधित्व करते हैं प्राचीन जनसंख्या का एक छोटा सा हिस्सा पुरोहित लोगों का, तब एक इतिहासज्ञ कह सकता है कि पुराना अहदनामा तथा होमर की कविताओं पर भी यह नियम लागू होता है। यदि यह कहा जावे कि उस काल में लेखक तो कम थे परन्तु पाठक बहुत थे तो यह भी सत्य नहीं है आज के इस युग में भी जब पढ़ने वाले बहुत है किसी प्रकाशक से पूछो तो वह बतावेगा कि किसी बड़े व्यक्ति की भी कोई पुस्तक 5000 छप जावे। तो उसे ही पर्याप्त माना जावेगा। अभी नया अहदनामा का संशोधित संस्करण प्रकाशित हुआ और उसे सबसे अधिक बिका हुआ माना गया परन्तु वह भी 8 करोड़ अंग्रेजी भाषी जनता में 5 लाख से अधिक नहीं बिक पाया। और यदि हम प्राचीन यूनानी, रोमन अथवा पारसी साहित्य पर दृष्टि डालें तो सम्भवतया होमर की कविताओं को छोड़कर शेष साहित्य का नाम तक हजारों लोगों के अतिरिक्त किसी ने नहीं सुना है।

(क्रमशः)

सम्पादकीय

राष्ट्र निर्माण में युवाओं का योगदान

किसी भी देश की उन्नति में उस देश की युवा पीढ़ी का हमेशा योगदान होता है। जिस देश की युवा पीढ़ी नशे से मुक्त है, राष्ट्र भक्ति की भावना कूट-कूट कर भरी हुई है वही राष्ट्र उत्कर्ष को प्राप्त करता है। इसी राष्ट्र की युवा पीढ़ी को संस्कारवान एवं चरित्रवान बनाने के लिए हमेशा प्रयत्नशील रहना चाहिए। युवा पीढ़ी अपने लक्ष्य से भटक न जाए, नशे की दलदल में न फंस जाए, इस बात के लिए हमेशा प्रयास होना चाहिए। किसी कवि ने बहुत सुन्दर पंक्तियां लिखी हैं-

जवानों जवानी में चलना जरा संभल कर,
आती नहीं है दोबारा निकल कर।
कठिन यह जवानी ही मंजिल है दोस्तों ,
लड़खड़ा जाए न कुछ दूर चल कर।
विषय रूपी रहजन अनेकों मिलेंगे,
खबरदार कोई ले न जाए छल कर।
जिन्दगी न चीज है लुटाने की वस्तु,
लुटाया इसे जिसने रहा हाथ मल कर

कवि का कहने का भाव है कि जिन्दगी रूपी अनमोल उपहार को जो नशे में बर्बाद कर देता है, बुरे कार्यों में बिता देता है उसे अन्त में पछताना पड़ता है। इसीलिए माता-पिता एवं गुरू का कर्त्तव्य है कि वे युवा पीढ़ी को कुमार्ग पर जाने से रोके। उनका निर्माण इस प्रकार से करें कि वे हमेशा अच्छे गुणों को धारण करते हुए सन्मार्ग पर चलें।

राष्ट्र निर्माण का प्रथम साधन है- चरित्र बल। जिस प्रकार शरीर को संभालने के लिए रीढ़ की हड्डी आवश्यक है उसी प्रकार राष्ट्र रूपी शरीर को संभालने के लिए चरित्र बल रूपी मेरू दण्ड आवश्यक है। बंगला के सुप्रसिद्ध उपन्यासकार शरतचन्द्र चट्टोपाध्याय के इस कथन से प्रेरणा लेनी चाहिए कि-समाज में प्रचलित विधि विधानों के उल्लंघन का दु:ख चरित्र बल और विवेक बुद्धि के बल पर ही दूर किया जा सकता है। आकर्षक प्रलोभन के आगे मन फिसल हो जाता है, परन्तु चरित्रवान उन्हें ठुकरा देता है। वासनाओं के तूफान के आगे दुर्बल मन उड़ जाता है, परन्तु चरित्रवान इन तूफानों के बीच में भी अड़िग रहता है। उमड़ती हुई शक्ति के सागर को देखकर दुर्बल मन झुक जाता है, किन्तु चरित्रवान साहस के साथ अन्याय का मुकाबला करता है। युवक में व्यक्तिगत चरित्र की पवित्रता पैदा करनी पड़ेगी और इस चरित्रबल को राष्ट्र कल्याण की दिशा में मोड़ना पड़ेगा। यदि हम लोग इस प्रकार का चरित्र युवकों में पैदा कर सके तो देश की सर्वोत्तम सेवा होगी।

आज समाज में नशे के फैलने से युवा वर्ग इसमें बुरी तरह फंस चुका है। नशे की दलदल में फंसकर युवा शक्ति अपने भविष्य को बर्बाद कर रही है। जिस युवा शक्ति को राष्ट्र के भविष्य निर्माण में अपना योगदान देना चाहिए वही युवा वर्ग आज लक्ष्य से हीन होकर अपने भविष्य से खिलवाड़ कर रहे हैं। नशे की चपेट में आकर हमारा देश निराशा के गर्त में डूबता जा रहा है। आज का युवा वर्ग आने वाले राष्ट्र का भविष्य है। अगर हम इस युवा पीढ़ी को चरित्रवान बना दें और नशे से मुक्त कर दें तो राष्ट्र का भविष्य संवर सकता है।

राष्ट्र का निर्माण नवयुवकों की भीड़ से नहीं हुआ करता है। राष्ट्र के निर्माण के लिए ऐसे लोगों की जरूरत पड़ती है जिनके जीवन में यौवन शक्ति का प्रवाह हो परन्तु साथ ही विवेक की मशाल भी जलती रहे। यदि जीवन में विवेक की मशाल नहीं जलती है तो तरूणाई राष्ट्र के लिए संकट बनकर खड़ी हो जाती है। इस यौवन के वरदान के प्रसंग में उपन्यास सम्राट प्रेमचन्द का यह वचन सदा प्रेरणा देता रहेगा जवानी जोश है, बल है, साहस है, दया है, आत्मविश्वास है, गौरव है वह सब कुछ हैं जो जीवन को पवित्र, उज्जवल और पवित्र बना देता है। आज राष्ट्र का गौरव बढ़े, इसके लिए हमें युवकों को चरित्रवान बनाना होगा। आज राष्ट्र के अन्दर जिस प्रकार युवा पीढ़ी नशे की दलदल में धंस रही है, वह सबके लिए चिन्ता का विषय है। युवा पीढ़ी जिसके ऊपर राष्ट्र का भविष्य निर्भर करता है अगर वही युवा पीढ़ी नशे की दलदल में धंस जाए तो उस राष्ट्र की क्या दशा होगी, उसका अनुमान आप स्वयं लगा सकते हैं। मानवता का नाश करने वाले इस नशे को जड़ से खत्म करने के लिए सभी को एकजुट होना होगा। अगर प्रत्येक व्यक्ति अपना, अपने परिवार का सुधार कर लें तो राष्ट्र का अपने आप सुधार हो जाएगा। आज की युवा पीढ़ी के भटकने का कारण यही है कि उन्हें अच्छे संस्कार नहीं मिल रहे हैं। घर में, स्कूलों में, कॉलेजों में जहां पर व्यक्ति के व्यक्तित्व का विकास होता है, उसके नव जीवन का निर्माण होता है वहां पर उन्हें उस प्रकार की शिक्षा नहीं मिल पा रही है जिससे वे चरित्रवान् बन सकें। नशा व्यक्ति की विवेकशीलता को खत्म कर देता है। विवेक के समाप्त होने पर मनुष्य और पशु में कोई फर्क नहीं रह जाता है।

आज राष्ट्र का गौरव बढ़े, इसके लिए हमें युवकों को नशामुक्त और चरित्रवान बनाना होगा। युवकों के चरित्र को गौरवमय बनाने के लिए उनके चरित्र में भारतीय संस्कृति का दिव्य प्रकाश होना चाहिए। आज प्रत्येक राजनैतिक दल नवयुवकों को अपनी ओर आकर्षित करने के लिए हर प्रकार के हथकण्ड़े अपनाते हैं और आज का युवा मानस दिशा भ्रमित होकर उनके इशारों पर बन्दर की तरह नाच रहा है। आज इन दिग्भ्रमित युवकों को दिशा निर्देशन की जरूरत है। इस दिशा निर्देशन के पीछे राष्ट्र भक्ति , विवेक शीलता, अपनी संस्कृति के प्रति गौरव की भावना का उद्देश्य निहित होना चाहिए। तब तक नशामुक्ति केन्द्रों से नशे को समाप्त नहीं किया जा सकता जब तक उनके अन्दर विवेक की, राष्ट्रभक्ति की भावना स्वयं पैदा न हो। इसलिए राष्ट्र के प्रत्येक नागरिक का कर्त्तव्य है कि इस गम्भीर समस्या पर विचार करके इस का समाधान अवश्य निकालें ताकि राष्ट्र के भविष्य को बर्बाद होने से बचाया जा सके और युवा वर्ग की ऊर्जा को सकारात्मक कार्यों मे लगाया जा सके।

आज आर्य समाज को इस दिशा में बहुत अधिक कार्य करने की आवश्यकता है। महर्षि दयानन्द सरस्वती जी की विचारधारा युवाओं के अन्दर नया उत्साह पैदा कर सकती है। इसीलिए अधिक से अधिक संख्या में युवाओं को आर्य समाज के साथ जोड़ा जाए। आर्य समाज में उन युवाओं के लिए विशेष रूचिकारक कार्यक्रमों का आयोजन किया जाए जिससे आज का युवा वर्ग आर्य समाज की ओर आकर्षित हो। अगर आज का युवा आर्य समाज की विचारधारा को जीवन में अपना ले तो राष्ट्र का बहुत कल्याण हो सकता है।

प्रेम भारद्वाज
संपादक एवं सभा महामन्त्री

आर्य समाज जवाहर नगर लुधियाना का वार्षिक उत्सव

आर्य समाज जवाहर नगर लुधियाना का वार्षिक उत्सव 15 दिसम्बर शुक्रवार से 17 दिसम्बर 2017 रविवार तक बड़े उत्साहपूर्वक मनाया जा रहा है। जिसमें मंगल यज्ञ होगा जिसके ब्रह्मा पंडित बाल कृष्ण शास्त्री (पुरोहित) होंगे। आर्य जगत के प्रसिद्ध वैदिक विद्वान डा. वीरपाल जी विद्यालंकार (गाजियाबाद) के उत्तम प्रवचन एवं श्री कल्याण सिंह जी बेदी भजनोपदेशक (रूड़की) तथा पंडित राजेन्द्र शास्त्री जी के मनोहर भजन होंगे। कार्यक्रम 15 और 16 दिसम्बर 2017 को प्रातः 8.00 बजे से 10.00 बजे तक और रात्रि 7.00 से 9.00 बजे तक होगा। समापन समारोह रविवार 17 दिसम्बर 2017 को प्रातः 8.30 बजे से 12.30 बजे तक होगा। आप सपरिवार एवं इष्ट मित्रों सहित प्रधान कर धर्म लाभ प्राप्त करें।

अनिल कुमार (महामंत्री) **विजय सरीन (प्रधान)**

बढ़ायें-ईश्वर से निकटता (परमानन्द प्राप्ति का एक मात्र मार्ग)

ले.-पं० उम्मेद सिंह विशारद वैदिक प्रचारक गढ़निवास मोहकमपुर देहरादून

ईश्वर किसे कहते है मूल तीन सिद्धान्त

1. ईश्वर उसे नहीं कहते जो कभी हो और कभी न हो? वह अजर अमर है-

2. ईश्वर उसे भी नहीं कहते जो कहीं हो और कहीं न हो? वह सर्वव्यापक है-

3. ईश्वर उसे भी नहीं कहते जो किसी का हो और किसी का न हो? वह सर्वाधार है। सबका हैं।

समर्पण

ब्रह्माण्ड के रचयिता निराकार सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, सर्व-शक्तिमान ईश्वर को पहचानना, जानना, और मानना ही मानव जीवन के सुख का आधार है। चन्दन वृक्ष के समीप उगने वाले पौधे उसकी समीपता की वजह से सुगन्धित हो जाते हैं, वैसे ही उसकी उपासना, साधना, और आर्ष ग्रन्थो के स्वध्याय से हम ईश्वर के करीब अर्थात् उसका आभास कर सकते हैं। ईश्वर की समीपता का अर्थ है, ईश्वरीय गुणों को धारण करना है।

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने सत्य ईश्वर का मार्ग दिखाया

युग पुरूष महर्षि दयानन्द जी ने आर्य समाज के दूसरे नियम में ईश्वर के सत्य गुण बताकर संसार का कल्याण किया है वह नियम है, ईश्वर सचिदानन्द स्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्व-व्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर-अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्त्ता है, उसी की उपासना करनी योग्य है। यदि मानव समाज ईश्वर के उपर्युक्त गुणों के आधार पर माने, जाने विचारे तो संसार का सम्पूर्ण मानव कलह ईर्ष्या व अज्ञानता समाप्त हो कर मुख शान्ति का साम्राज्य स्थापित हो सकता है।

ईश्वर के कार्यों को मनन करके उसकी उपासना से निकटता बढ़ती है

उपासना का अर्थ है कि हम ईश्वर के सृष्टि क्रम विज्ञान का मनन करें। यह स्वाभाविक है कि हम जिसके गुणों का मनन करते है, उससे हमें अनुराग होता जाता है, और हम उसके नजदीक होते जायेंगे। इसी प्रकार हम ईश्वर के गुणों का मनन करेंगे तो हमारी श्रद्धा ईश्वर में बनती जायेगी। ईश्वर हममें समाविष्ट होते जायेगें। और हम ईश्वर में समाविष्ट होते जायेगें। हमें ईश्वर के गुणों जैसा बनने का प्रयत्न करना चाहिए। उपासना का तात्पर्य अपनी मनोभूमि को इस लायक बनाना कि हम ईश्वर के आज्ञानुवर्ती बन सके। साधना का अर्थ है अपने गुण कर्म स्वभाव को सात्विक वृत्ति में साथ लेना है। इसके लिये हमें नित्य आत्म निरीक्षण करना चाहिए। अपनी अज्ञानता को दूर करने के लिये स्वाध्याय, संयम, और सेवा के लिये भी हमें प्रयत्नशील होना चाहिए।

आइऐ हम ईश्वर के कुछ कार्यों का मनन करते हैं

ईश्वर ने अदभुत सृष्टि रचना की है और सूर्य, चन्द्रमा, तारे व सारे ब्रह्माण्ड को बिना किसी सहारे के अपनी शक्ति से चला रहा है व स्थिर किये हुए है। जैसे-सूर्य पृथ्वी से 9 करोड़ तीस लाख मील दूर है। चन्द्रमा पृथ्वी से 2 लाख चालीस हजार मील दूर है। निरन्तर अपनी धूरी पर घूमते रहते है किन्तु आश्चर्य है इनकी दूरी घटती बढ़ती नहीं है। चन्द्रमा पृथ्वी की परिक्रमा 17 दिन 7 घन्टे 16 मिनट और 12 सेकिन्ड में पूरी करता है। पृथ्वी अपनी धूरी पर 23 घण्टे 56 मिनट 9 सैकिन्ड में घूमती है, और सूर्य की परिक्रमा पृथ्वी करते हुए 1 सेकिन्ड में 18 मील की दूरी तय करती है, और अपनी धूरी पर 1037 मील प्रति घन्टा के रफ्तार से घूमती हैं सूर्य का ब्यास 8 करोड़ 58 लाख 85 हजार मील है। और प्रकार की किरणें पृथ्वी पर 8 मिन्ट में पहुंचती है। सबसे बड़ा ग्रह बृहस्पति है जो अपनी धूरी पर 9 घन्टे 55 मिन्ट में घूमता है और 333 दिनों में सूर्य की परिक्रमा करता है।

सूर्य जलती हुई अग्नि का पिंड है और इसकी सतह का तापमान 12000 डिग्री सेन्टी ग्रेट है। और दूरी इतनी है कि तापमान सामान्य बना रहताहै। अगर थोड़ी सी भी दूरी नजदीक हो जाऐ तो पृथ्वी जलकर राख हो जाये, और थोड़ी सी दूर हो जाये तो पृथ्वी बर्फ बन जायेगी। सूर्य की किरणे सीधी पड़ जाये तो जीना दूभर हो जाए। ईश्वर की व्यवस्था से इसमें सुरक्षा ओजोन किरणें रहती है, जिसे ओजोन परत कहते है। इसी प्रकार पृथ्वी का व्यास 7900 मील है और पर्वतों की ऊंचाई 511 मील है, और समुद्र की गहराई 7 मील है। 3/4 संसार में जल है।

ब्रह्माण्ड का प्रत्येक परमाणु एक निर्धारित नियम से कार्य कर रहा है। यदि उसमें जरा भी व्यवधान हो जायेगा तो विराट ब्रह्माण्ड का अस्तित्व एक क्षण में समाप्त हो जाये, और एक कण के विस्फोट से अनन्त प्रकृति में आग लग सकती है। सर्वाधिक बड़े तारों की चमकने वाली संख्या 20 है। इसमें व्याध नाम का तारा सबसे अधिक दीप्तिमान है। यह सूर्य की तुलना में 21 गुना अधिक है। सूर्य का तापमान 2310 डिग्री फारेनहाइट है और पृथ्वी 110 फारेनहाइट डिग्री है।

पृथ्वी के ऊपर अयन मण्डल की पट्टियां जिन्हें आई लेग स्पीयर कहा जाता है जिससे पृथ्वी सुरक्षित रहती है तथा पृथ्वी सूर्य की परिक्रमा 1 वर्ष में पूर्ण करती है और उसकी गति प्रति घन्टा 1 लाख 1 सौ 99 मील होती है। सूर्य और मण्डल का व्यास 1 शंख 18 खरब किलोमीटर है और समूचे मण्डल को सम्भालना सूर्य का काम है। समस्त सौर मण्डल बिना टकराये सहायता करते रहते हैं।

नोट: ईश्वर की महान सुव्यवस्थित नियमित निर्धारित सत्ता का आभास कराने के लिये विभिन्न शास्त्रों से आंकड़े लिये गये है। खगोल शास्त्रीयों के अनुसार इनका वर्णन कम ज्यादा हो सकता है। यह तो ईश्वर के सक्षिप्त कार्यों का वर्णन है यदि हम ईश्वर के गुणों और कार्यों का चिन्तन करेंगे तो उसकी विशालता का आभास हो जायेगा। ईश्वर के गुणों का और सम्पूर्ण सृष्टि क्रम विज्ञान का कोई भी वर्णन नहीं कर सकता है।

ईश्वर से कैसे निकटता और श्रद्धा बढाऐ मेरा अनुभव

हमारी दिनचर्या और उपासना का समय नियमानुसार होना चाहिए और सन्ध्या के बाद चिन्तन करना चाहिए कि ईश्वर अतिमहान है, अत: यह उसे देख नहीं सकती, वह अति सूक्ष्म है व सभी पदार्थों में ओत प्रोत है, वह ईश्वर हृदय गुफा में विद्यमान हैं ईश्वर उपासना का समय प्रात: 5 बजे एकान्त सुनसान होता है। स्नान के पश्चात् योग आदि करके संध्या करके फिर ध्यान चिन्तन करें कि ईश्वर ने सूर्य, चन्द्रमा, तारे, वायु, अग्नि, वनस्पति, अन्न, फल आदि हमारे लिये दिये है, और ईश्वर की विशालता का भी ध्यान करते जाऐ। कानो में ध्वनि ओ३म् की श्रवण करते जाऐ एकाग्र होकर ध्यान में उस जगदीश्वर की कृपा का आभास करते-करते अश्रुपांत होने लगे तो समझिये हम ईश्वर के निकट आ गये है। अपने हृदय व मस्तिष्क में कल्पना से ओ३म् लिख लेवें, बस उसी ध्यान में मन को लगा देंवे, और ईश्वर की महानता व कार्यों का चिन्तन करते जाऐं अपार आनन्द की प्राप्ति होती है।

ईश्वर हमारा स्वाभाविक जन्म-जन्म का मित्र है

हमें हर पल स्परण रखना चाहिए ईश्वर हमारा स्वभाविक मित्र है। हमने ही उसकी उपेक्षा कर रखी हैं, वह हमारी उपेक्षा कभी नहीं करता है। हम एक उसी ओर बढ़ने की चेष्टा तो करें फिर पता चलेगा वह हमारा स्वागत कैसे करता है। संसार के सम्बन्धी तो एक दिन छोड़ने पड़ते है, और संसार में हमारा संयोग होता है, जहां संयोग होता है वहां वियोग अवश्य होता हैं किन्तु ईश्वर से न कभी संयोग होता है न कभी वियोग होता है अपितु सदैव योग ही योग रहता है। इसीलिए मैंने इस लेख का शीर्षक रखा है बढ़ाऐं-ईश्वर से निकटता।

आर्य मर्यादा साप्ताहिक पढ़ें और दूसरों को पढ़ाएं तथा लाभ उठाएं।

वेदों में सार्वभौमिकता के सूत्र

ले०-इन्द्रजित देव, चूना भट्ठियां, सिटी सैन्टर के निकट, यमुनानगर 135001

लगभग 2 अरब वर्ष जब यह सृष्टि बनी थी, तब अनेक देश या अनेक राष्ट्र व अनेक जातियाँ नहीं थीं। पूरी धरती एक ही राष्ट्र थी। परस्पर मतभेदों, स्वार्थों व अज्ञान मूलक मान्यताओं के कारण समयान्तर से धीरे-धीरे धरती का बंटवारा होता गया व अब देशों की संख्या 200 से भी अधिक हो चुकी है। सब के संविधान अलग-अलग हैं, सब के स्वार्थ पृथक्-पृथक् हैं व सब की मान्यताएं भी परस्पर विरोधी बनी हैं। जन्म से मनुष्य जाति एक ही है परन्तु सम्प्रदायों व मज़हबों ने मानसिक विभाजन की रेखाएं खींच दी हैं। मनुष्यों के शरीरों की रचना व उनका संचालन पूरी दुनिया में एक-सा ही है। एक समान गर्भ स्थापित होता है तथा एक जैसा ही सब मनुष्यों के शरीरों का विकास गर्भ में होता है।

वेद ईश्वरीय ज्ञान है तथा सभी प्राणियों का पिता होने से अपने ग्रन्थ में पक्षपात व भेदभावपूर्ण उपदेश ईश्वर द्वारा देने का प्रश्न ही उत्पन्न नहीं होता। वेदों में प्राणीमात्र को मित्र की दृष्टि से देखने का उपदेश मिलता है। यजुर्वेद के 36वें अध्याय के आठवें मन्त्र में कहा है-

मित्रस्य चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे-अर्थात् हम सब एक दूसरे को मित्र की दृष्टि से देखें। वैदिक दृष्टिकोण विशाल व विस्तृत है। उसके अनुसार सारा संसार एक घौंसला है तथा उसमें रहने वाले सब प्राणियों के सुख-शान्ति की कामना की जाती है-

यत्र विश्व भवत्येकनीडम्

यजुर्वेद के चालीसवें अध्याय के सातवें मन्त्र में कहा है-

यस्मिन् सर्वाणि भूतानि आत्मन्नेवानुपश्यति।

अर्थात् प्राणीमात्र की आत्मा को अपने समान समझना एवं अपने को सबके समान समझना। यह आत्मवत् दृष्टि न केवल मनुष्य जाति के प्रति होनी चाहिए अपितु पशु-पक्षी आदि सभी प्राणियों के प्रति भी होनी चाहिए।

अथर्ववेद के उस मंत्र में भाई-बहन तथा अन्य सब लोकों को नियमपूर्वक मेल से रहकर समभाव व परस्पर प्रेम रखने का उपदेश है-

मा भ्राता भ्रातरं द्विक्षन्मा स्वारमुत स्वसा।

सम्यञ्च सव्रता भूत्वा वाचं वदतु भद्रया।। अ. 3-30-3

जाति भेद मन में न लाकर हमें घर में आए विद्वान् अतिथि को भोजन कराने का उपदेश भी अथर्ववेद के इस मन्त्र में उपलब्ध होता है-

एष वा अतिथिर्यच्छ्रोत्रिय-स्तस्मात् पर्वो नाशनीयात्।

अ.9-6-7

जिस प्रकार सूर्य तथा चन्द्रमा सब प्राणिमात्र के कल्याण की भावना से निरन्तर कार्यरत रहते हैं, उसी प्रकार हम भी समाज के कल्याण मार्ग पर चलते रहें। उस मार्ग पर चलने के लिए हम निरन्तर दानशीलता, हिंसारहित भावना व ज्ञानी व्यक्तियों का संसर्ग प्राप्त करते रहें, यह उपदेश हमें ऋग्वेद के पांचवें मण्डल के उस मन्त्र में मिलता है-

स्वस्ति पन्थामनुचरेम सूर्याचन्द्र मसाविव।

पुनर्ददताघ्नता जानतां सं गमेमहि।। ऋग्वेद 5-51-15

मनुष्य मनुष्य का परस्पर ऐसा प्रेम-स्नेह का व्यवहार हो, जैसे गाय का नवजात बछड़े के प्रति होता है। सारे संसार में सुख और शान्ति के लिए एक मन वाले होकर सब मनुष्यों को साथ-साथ चलने व बोलने की शिक्षा अथर्ववेद के इस मन्त्र में वर्णित है-

सहृदयं सांमनस्यम्

अ. 3-30-1

इस समानता के लिए आवश्यक है कि मनुष्य अकेला न खाए। बाँटकर खाने का आदर्श ऋग्वेद के दसवें मंडल के इस मन्त्र में आपको मिल जाएगा-

केवलाघो भवति केवलादी।

अथर्ववेद में यह उपदेश भी आपको मिल जाएगा जिसमें कहा गया है कि सैंकड़ों साधनों से कमाए धन व पदार्थादि को हज़ारों व्यक्तियों में वितरित कर दिया करो।

शतहस्त समाहर सहस्त्रहस्त सं किर। अ. 3-24-5

पृथ्वी सब प्रकार के विचारों वाले, कर्त्तव्यों का पालन करने वाले तथा विभिन्न भाषाएं बोलने वाले सभी लोगों का एक घर है, यह शिक्षा अथर्ववेद में उस प्रकार मिलती है-

जन बिभ्रती बहुधा विवाचसं नाना धर्माणं पृथिवी यथौ-कसम्। अ. 12-1-45

ऐसे व्यक्ति के लिए सारा संसार एक इकाई बन जाता है तथा सभी भाषागत रंग जाति व सम्प्रदाय आदि भेदभाव से रहित हो जाता है। यही वसुधैव कुटुबकम् की भावना है। संसार के किसी भी देश का व्यक्ति हो, प्रदेश या सम्प्रदाय का हो, उसकी रक्षा करना मनुष्यमात्र का कर्त्तव्य है, ऐसा ऋग्वेद में कहा है-

पुमान् पुमांसं परिपातु विश्वतः।

ऋ. 6-75-14

यजुर्वेद के अड़तीसवें अध्याय में यह बड़ा श्रेष्ठ उपदेश दिया गया है कि केवल अपनी ही उन्नति से सन्तुष्ट न रहकर मनुष्यों को चाहिए कि वे सब की उन्नति में ही अपनी उन्नति समझें-

धर्मेतत्ते पुरीषं तेन वर्धस्व चा च प्यायस्व।

वर्धिषीमहि च वयमा च प्यासिषीमहि।। -यजुर्वेद 38/21

अर्थात् जैसे सर्वत्र अभिव्याप्त ईश्वर ने सबकी रक्षा तथा पुष्टि की है, वैसे ही हमें चाहिए कि दूसरों को निरन्तर पुष्ट करते रहें व उन्हें हम बढ़ाते रहें।

सभी परिवारों, देशों, प्रचलित जातियों व राष्ट्रों में परस्पर द्वेष व घृणा की स्थापना आज हमें देखने को मिलती हैं। ऐसी स्थिति से बचने के लिए हमें ऋग्वेद के इन अन्तिम मन्त्रों की सार्वभौमिक व सार्व-कालिक शिक्षा मिलती हैं-

सं गच्छध्वं सं वदध्वं सं वो मनांसि जानताम्।

ऋ. 10-191-2

अर्थात् हम सब को इकट्ठे रहकर प्रेमपूर्वक रहना चाहिए। हमारे विचार ज्ञानियों जैसे होने चाहिए व हमारी बोली भी एक होनी चाहिए-

समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः।

समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति।। ऋ. 10-191-4

अर्थात् मनुष्य जाति के संकल्प एक जैसे तथा परस्पर अविरोधी होने चाहिए। हमारे मन एक-दूसरे के अनुकूल हों ताकि सुख-सम्पत्ति में वृद्धि होवें।

सामाजिक, समरसता, राष्ट्रीय, सामाजिक व पारिवारिक सौमनस्य व सामञ्जस्य की स्थापना करना ही समानता है। समानता में सुख है, शान्ति तथा सब का कल्याण है। वेदों में व्यापक दृष्टि से सम्पूर्ण मनुष्य जाति के विषय में चिन्तन उपलब्ध है। इस चिन्तन व इस सोच के अनुसार आचरण करके ही मनुष्य इस पृथ्वी में सुख व शान्ति को सुप्रतिष्ठित कर सकता है। इन नियमों के पालन से हम इतने उदार बन जाएं कि क्षुद्र सीमाओं में न बन्ध कर विशाल पृथ्वी को अपना निवास स्थान समझें। वेद सम्पूर्ण संसार के मानवों को श्रेष्ठ समाज के निर्माण की प्रेरणा देते हैं। इनके पालन करने से ही साम्प्रदायिकता की संकीर्ण भावनाओं से मनुष्य मुक्त हो सकेगा। वैदिक सामाजिक मान्यताएं उदात्ततम भावनाओं की प्रेरणा देने वाली हैं। इनमें सर्वत्र सत्कर्मों व सद्गुणों का अदभुत समावेश है। भारत को यदि अपनी प्रतिष्ठित छवि को बचाकर रखना है तो वैदिक सिद्धांत ही सहायक होंगे। विश्व को परस्पर घृणा व द्वेष से बचाकर एवं वैदिक आदर्शों का अनुसरण करके ही राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय सन्तुलन स्थापित हो पाएगा। यही वेदों का ग्रहण करने योग्य मूल उज्वल सन्देश है।

आर्य मर्यादा के ग्राहक महानुभावों की सेवा में

आर्य मर्यादा साप्ताहिक निरन्तर आपकी सेवा में पहुंच रही है। जिन आर्य मर्यादा के ग्राहकों ने अभी तक अपना वार्षिक शुल्क या पिछला शुल्क नहीं भेजा है उनसे विनम्र प्रार्थना है कि वह अपना वार्षिक शुल्क जल्द से जल्द भिजवाने की व्यवस्था करें। आर्य मर्यादा का वार्षिक शुल्क मात्र 100/- रुपये है और आजीवन सदस्यता शुल्क 1000/- रुपये है। इसलिये मेरी सभी ग्राहक महानुभावों से प्रार्थना है कि वह अपना शुल्क जल्द से जल्द भिजवाने की व्यवस्था करें। इसके साथ ही आर्य समाजों के पदाधिकारियों एवं सदस्यों से भी निवेदन है कि वह अधिक से अधिक आर्य मर्यादा के ग्राहक बनाने में सहयोग करें। आशा है आप का सहयोग हमें प्राप्त होगा।

-व्यवस्थापक आर्य मर्यादा

अग्निहोत्र विषयक चर्चा

ले०-डॉ० सुशील वर्मा मास्टर मूलचन्द वर्मा गली फाजिल्का (पंजाब)

अग्नि प्रदीपन के पश्चात् तीन समिधाओं का आदान किया जाता है। ये समिधाएें घृत में डूबोकर एक-एक मन्त्र से अग्नि के भेंट की जाती है।

पहला मन्त्र-ओ३म् अयंत इध्म आत्मा जातवेदस्तेनेध्यस्व वर्धस्व चेद्धवर्धय चास्मान् प्रजया पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेनान्नाधेन समेधय स्वाहा।। इदमग्नये जातवेदसे इदं न मम्

(आश्वा-गृह्य सूत्र 1.10.12)

उस परम पिता को स्मरण करता हुआ (जातवेद) हे सब उत्पन्न पदार्थों में विद्यमान तथा उत्पन्न पदार्थों के प्रकाशक अग्नि! यह समिधा तेरे जीवन हेतु है। उससे प्रदीप्त हो, और बढ़ा, प्रदीप्त कर और बढ़! हमें प्रजा से पशुओं से, ब्रह्मतेज से और भक्षणीय अन्न से एवं अन्नादि भोगों को भोगने के सामर्थ्य से भी समृद्ध कर। हम समिधा की आहुति देते हैं। यह आहुति जातवेदस् अग्नि के लिए है। यह आहुति मेरे लिए नहीं है।

अग्नि को सम्बोधन कर कहा जा रहा है कि तू इस समिधा से प्रदीप्त हो, उसे प्रदीप्त कर और बढ़ा। तो क्या यह जड़ अग्नि को सम्बोधन किया गया है? नहीं। यहाँ कहने का तात्पर्य है कि जैसे अग्नि प्रदीप्त होकर बढ़ती है वैसे हम भी तेजस्वी हों और उस तेजस्विता को बढ़ाएँ। हम अपनी आत्मग्नि को प्रज्वलित करें।

अग्निप्रदीपन के समय एक मन्त्र (यजु 15/54) उच्चारण किया जाता है। ''उद्बुध्यस्वाग्ने..... सीदत'' पुरोहित कहता है-उठ श्रद्धा से उठ, क्यों उठे? ''प्रतिजाग्रहि'' जगाओ, किसे जगाओ? अग्नि को, चेतन अग्नि को। वह चेतन अग्नि कौन सी है? वह है आत्मा जो बुद्धि से सम्बन्धित है, ज्ञान से सम्बन्धित है। उद्देश्य पूर्ति के लिए। उद्देश्य है अन्धकार का नाश! अत: यह सम्बोधन है कि आत्मग्नि को जागृत करने के लिए। यहाँ चार वस्तुओं की समृद्धि की प्रार्थना की गई है। पशु, प्रजा ब्रह्मवर्चस एवं अन्नाद्य। प्रजा-सन्तति। वास्तव में यज्ञ तो तीनों आश्रमों के लिए है। गृहस्थ तो नि:सन्देह सन्तान की कामना करेगा ही, तो क्या ब्रह्मचारी एवं वानप्रस्थी भी प्रजा की कामना करे। वास्तव में प्रजा का रुढ़ि अर्थ तो सन्तान ही है परन्तु यौगिक अर्थ है ''जो प्रकृष्ट रूप से उत्पन्न हो।'' ''प्रकर्षेण जायते इति प्रजा'' अर्थात् जो जो जिस जिस को उत्पन्न करता है वही उसकी प्रजा है। ब्रह्मचारी की प्रजा है तप, विद्या, बल एवं वीर्य। गृहस्थ की प्रजा सन्तान। वानप्रस्थ की प्रजा है तपस्या, संयम।

इस प्रकार प्रत्येक अग्निहोत्री अपनी-अपनी प्रजा के लिए कामना करता है। फिर पशु की समृद्धि की कामना, अर्थात् गाय, अश्व और अवि आदि की वृद्धि। गँऊओं से दूध, घृत एवं पञ्चामृत की वृद्धि। अश्व से सवारी आदि, अवि-भेड़ आदि से ऊन आदि की प्राप्ति। वैसे तो पशु का अर्थ शारीरिक इन्द्रियाँ भी है। अत: इन्द्रियों के ऐश्वर्य की प्रार्थना। ब्रह्मवर्चस से ब्रह्मतेज, आत्मबल एवं ईश्वरीय विश्वास के बल की कामना। इसी प्रकार अन्नाद्य से भक्षणीय अन्न की प्राप्ति और अन्न के भक्षण के सामर्थ्य की प्रार्थना।

मन्त्र में यह भी कहा गया है ''अयं त इध्म आत्मा जातवेद:'' शब्द जातवेदस् का निर्वचन यास्काचार्य इस प्रकार करते हैं-

''जातानि वेद, जातानि वैनं विदु:, जाते जाते विद्यते इति वा, जातवित्तो वा जातधन: जातविद्यो वा जात प्रज्ञान:।।''

जातादि वेद-जो उत्पन्न हुए जड़ चेतनादि को जानता है। ईश्वर।

जातानि वैनं विद:-उत्पन्न हुए सब प्राणी उसे जानते हैं-अग्नि, सूर्य, जल, परमेश्वर जाते जाते विद्यते-उत्पन्न हुए समस्त जगत में जो विद्यमान है, परमेश्वर, पंचभूत जात वित्तो वा जातधन:-धन प्रदाता, ऐश्वर्यवान।

जात विद्यो वा जातप्रज्ञान: विद्वान जिसकी विद्या प्रसिद्ध है-आचार्य, अतिथि सन्यासी, परमेश्वर।

यहाँ जातवेदस् परमात्मा व अग्नि दोनों के लिए प्रयुक्त है।

अर्थात् हे जातवेदस्! मेरी यह आत्मा आपके लिए समिधा है। यजमान आत्मा को समिधा बनाकर परमेश्वर को समर्पित कर रहा है। शिष्य गुरु की ज्ञानाग्नि में अपने को समर्पित करता है। राष्ट्र भक्त अपने आप को राष्ट्र के प्रति समिधा बन आहुत कर देता है।

''वयं तुभ्यं बलिहृत: स्याम'' (अथर्व 12. 1.62) क्योंकि भूमि उसकी माता है और वह उसका पुत्र! वह राष्ट्र भूमि की यज्ञाग्नि में समिधा बन आहूत हो जाता है। इसी यज्ञ भावना के कारण वह कहता है **''माता भूमि: पुत्रो अहं पृथिव्या:'' (अथर्व 12/1/12)**

दूसरी आहुति के लिए दो मन्त्र विनियोग किए गए हैं। पहला मन्त्र जो यजुर्वेद (3.1) से है, का आदेश है कि समिधा के द्वारा यज्ञाग्नि की सेवा करें। घृताहुतियों से गतिशील एवं अतिथि के समान प्रथम सत्करणीय यज्ञाग्नि को प्रबुद्ध करो। इसमें हवियाँ प्रदान करो। यह आहुति अग्नि के लिए है। मेरे लिए नहीं।

दूसरे मन्त्र (यजुर्वेद 3-2) में कहा गया कि 'सुसमिद्धाय' अर्थात् सम्यक रूप से प्रदीप्त ज्वालामय, पवित्र जातवेदस् संज्ञक अग्नि के लिए उत्कृष्ट घृत की आहुतियाँ दो। यह आहुति जातवेदस संज्ञक अग्नि/परमात्मा के लिए है। मेरे लिए नहीं।

इद्धम् का अर्थ है सामान्य जलती हुई आग, समिद्ध अर्थात् अधिक जलती हुई अग्नि, सुसमिद्ध अर्थात् तीव्रता के साथ प्रचण्ड अग्नि, सम्यक रूप से जलती हुई अग्नि। इद्धम् अग्नि केवल पृथिवी लोक तक रहती है समिद्ध अग्नि अन्तरिक्ष तक तथा सुसमिद्ध आहुति द्युलोक तक पहुँचती है। यह तथ्य वैज्ञानिक तौर पर भी प्रमाणित है कि गैस जितनी हल्की होगी वह उतनी ही शीघ्र वायुमण्डल में मिल सकेगी।

The rate of diffusion of gases are invesally proportional to the square root of their densities'' Grahm's Law of diffusion.

यही सत्य यजुर्वेद के (6.16) मन्त्र में पाया जाता है'' स्वाहाकृते ऽऊर्ध्व-नमसं मारुतं गच्छतम्।''

दूसरी ओर यदि अग्नि पूरी तरह से प्रज्ज्वलित न हो तो समिधा जिसमें मुख्यत: Cellubose होता है, आक्सीजन के साथ मिलकर Co_2 कार्बन-डाइक्साइड की जगह Co कार्बन मोनोक्साइड बनाती है जो कि जहरीली होती है। इसलिए अग्नि पूरी तरह से ज्वलित होनी चाहिए, ताकि उसमें डाली गई सामग्री और घृत की क्रियाएँ पूर्ण हो सके, अन्यथा क्रियाएँ अधूरी ही रहेगीं। साधारणतया कहा जाता है कि जिस हवन में धुँआ हो वो यज्ञ सफल नहीं माना जाता। तात्पर्य यही है कि प्रचण्ड अग्नि ही क्रियाओं को पूर्ण करती है अन्यथा कार्बन मोनोक्साइड जैसी जहरीली गैसें उत्पन्न होगीं और सामग्री एवं समिधाएँ भी अनजली रह जाएगीं।

प्राय: देखा गया है कि पहले मन्त्र के 'इदं अग्नये इदं न मम्' का उच्चारण नहीं किया जाता, जबकि महर्षि दयानन्द जी का आदेश दोनों मन्त्रों को पूरा बोलने का है। किसी मन्त्रांश का त्याग स्वामी जी को स्वीकार्य नहीं। जो लोग मन्त्रांश नहीं बोलते उन का तर्क यह है कि पहले मन्त्र में आहुति अग्नि के लिए है और दूसरे मन्त्र में जातवेदस् अग्नि के प्रति समर्पण। क्यों जातवेदस् अग्नि में ही अग्नि समाहित है इसलिए पहले मन्त्रांश का उच्चारण आवश्यक नहीं। परन्तु मन्त्रांश का उच्चारण न करना ऋषि आज्ञा की उल्घंना है साथ ही मन्त्र का निरादर।

चौथे मन्त्र से तीसरी आहुति दी जाती है। यहाँ मन्त्र का अर्थ है-हे तीव्र प्रज्जवलित अग्नि! (अंगिर:) तुझ को समिधाओं से एवं घृत से हम तुझे बढ़ाते हैं। ''यविष्टय'' का अर्थ है कि हे पदार्थो को मिलाने एवं पृथक करने की महान शक्ति से सम्पन्न अग्नि! तू बहुत अधिक (बृहत् शोच) प्रदीप्त हो। यह आहुति अग्नि जो कि अंगिर संज्ञक है, के लिए है। मेरे लिए नहीं। जहाँ 'यविष्ठय' शब्द का अर्थ अग्नि के जोड़ने तथा पृथक पृथक करने का है, वही 'यविष्ठय' का अर्थ युवा अग्नि भी है क्योंकि 'यविष्ठय' शब्द 'युवन्' से सिद्ध होता है। 'युवन्' में 'यु' धातु है जिसका अर्थ मिलाना एवं पृथक-पृथक करना है। अग्निहोत्र का अग्नि वायु मण्डल के साथ हव्य दुव्यों के यज्ञीय धूम के साथ संयुक्त करते हैं और वायुमण्डल में विद्यमान, मलिनता, रोगकृमि आदि को उसके पृथक भी करता है। क्योंकि अग्नि के प्रयोग से पदार्थ जुड़ सकते हैं और अणुओं में विभक्त हो सकते हैं।

तीन समिधाएँ अर्पित करते समय यजमान यह चिन्तन करे कि ये तीन समिधाएँ क्रमश: पृथिवी,

(शेष पृष्ठ 7 पर)

दैनिक जीवन में अग्निहोत्र

ले०-डॉ० धर्मेन्द्र कुमार शास्त्री पूर्व सचिव, दिल्ली संस्कृत अकादमी दिल्ली सरकार

सनातन प्राचीन आर्य वैदिक संस्कृति के अनुसार नित्यकर्म बतलाये गये हैं। जिन्हें सभी गृहस्थ, प्रतिदिन किया करें, धनी हो या निर्धन, बड़ा हो या छोटा, प्रत्येक के लिए आवश्यक होने से उन नित्य यज्ञों का क्षेत्र बड़ा विस्तृत है। वे मनुष्यमात्र के समान कर्म हैं, इसलिये उन्हें महायज्ञ कहते हैं। भगवान् मनु ने इन पांच यज्ञों का अनुष्ठान नित्य एवं आवश्यक बतलाया है-

ऋषि देवयज्ञं भूतयज्ञं च सर्वदा।
नृयज्ञं पितृयज्ञं च यथाशक्तिर्न हापयेत्।।

मनु० 4/22

जहां तक हो सके (ऋषियज्ञं) ब्रह्मयज्ञ (देवयज्ञं) देवयज्ञ (भूतयज्ञं) बलिवैश्वदेवयज्ञ (नृयज्ञं) अतिथि यज्ञ और (पितृयज्ञं) पितृयज्ञ को (न) नहीं (हापयेत्) छोड़े।

महाभारतकार वेदव्यासजी के उपदेशानुसार-

अहन्यहनि ये त्वेतानकृत्वा भुञ्जते स्वयम्।
केवलं मलमश्नन्ति ते नरा न च संशयः।

महाभारत अश्व 104/16

(अहन्यहनि) प्रतिदिन ये जो (एतान्) इन महायज्ञों को (अकृत्वा) किये बिना स्वयं (भुञ्जते) खाते पीते हैं, (ते) वे (नराः) नर (केवलं) केवल (मलं) मल खाते हैं (च) वस्तुतः इसमें (संशयः) संशय नहीं है।

आईये! पञ्चमहायज्ञ पर क्रमशः विचार करते हैं सबसे प्रथम है **ब्रह्मयज्ञ**-प्रतिदिन प्रातः तथा सांयकाल प्रभु के चरणों में उपस्थिति होकर, अपने विनय तथा प्रेम का प्रकाश करना और परमपिता के गुणों की आराधना करना ब्रह्मयज्ञ का एक भाग है।

स्वाध्याय अर्थात् मोक्षशास्त्रों का अध्ययन करना दूसरा भाग है। शास्त्रों को पढ़ने तथा उनकी बातों पर आचरण करने से उनकी सच्चाई का अनुभव होता है और धर्म में श्रद्धा बढ़ती है। मनुस्मृतिकार कहते हैं-

यथा यथा हि पुरुषः शास्त्रं समधिगच्छति।
तथा तथा विजानाति विज्ञानं चास्य रोचते।।

मनु० 4/20

(यथा यथा) ज्यों ज्यों पुरुष शास्त्र को (समधिगच्छति) समझता जाता है (तथा तथा) त्यों त्यों (विजानति) विशेष जाना जाता है और उसको रूचिकर होता है। स्वाध्याय करने वाला आत्मा के स्वरूप से भलीभांति परिचित होकर ठीक-ठीक चिन्तन करना सीख जाता है। सन्ध्योपासना-योग द्वारा आत्मिक मर्मों के मनन का अभ्यास हो जाता है। जब स्वाध्याय तथा भक्तियोग दोनों में सम्पन्न हो जाता है, तो प्रभु के प्रकाश का पात्र बनता है।

देवयज्ञ-इस प्रकार ब्रह्म अर्थात् ईश्वर और वेद के सत्संग से पवित्र होकर मनुष्य को चाहिये कि देवताओं का सत्संग करें। देव का अर्थ परमात्मा है। प्राकृतिक ज्योतियों, शक्तियों और विभूतियों को भी देव कहते हैं। विद्वान् जनों को भी देव कहते हैं। साधक को उचित है कि ब्रह्मयज्ञ में विशेष रूप से प्रभु के आन्तरिक प्रकाश को देखने के लिये उत्सुक होकर अन्तर्मुख होने का अभ्यास करें। देवयज्ञ में उसकी बाह्य विभूतियों और चमत्कारों का ध्यान करता हुआ, उसके विराट् स्वरूप का चिन्तन करें।

पितृयज्ञ-प्रतिदिन अपने माता-पिता, आचार्य, गुरूजन तथा अन्य आश्रित सम्बन्धियों की सेवा तथा तृप्ति का ठीक-ठीक प्रबन्ध करना ही इस यज्ञ का तात्पर्य है। माता-पिता अपनी सन्तान के लिए जो-जो कष्ट उठाते और अपना आराम छोड़कर अपने बच्चों के लिए जो कुछ करते हैं, उसका ऋण चुका सकना असम्भव है। अतः अपने वृद्ध, माता-पिता सबके प्रति सन्तान अपने कर्तव्य का पालन करें।

अतिथियज्ञ-यह चौथा महायज्ञ वहीं हो सकता है जहां पितृयज्ञ की प्रतिष्ठा हो। जब कोई विद्वान्, सदाचारी, सन्यासी, महात्मा, अनुभवी सज्जन हमारे घर आ पहुंचे, तो हमारा द्वार उसके स्वागत करने के लिए सदा खुला रहना चाहिये।

बलिवैश्वदेवयज्ञ-पांचवे महायज्ञ द्वारा प्राणिमात्र से सहानुभूति प्रकट करने का उपदेश है। ब्रह्मयज्ञ में महान् प्रभु का ध्यान कर, साधक महान् बनना चाहता है। क्योंकि जिस प्रकार के संकल्पमय आदर्श हमारे सम्मुख होते हैं, हम वैसे ही ढलते जाते हैं। देवयज्ञ में वह भौतिक देवताओं में प्रभु की ज्योति को अनुभव करता हुआ, उनके समान उपकारी बनने का यत्न करता है। पितृयज्ञ पारिवारिक एकता को बढ़ाने वाला है। अतिथियज्ञ जातीय प्रेम तथा संगठन का अभ्यास क्षेत्र है और अन्त में सब संकोच का त्याग सिखाने के लिए भूतयज्ञ आता हैं। जैसे ब्रह्म सबके हृदय में निवास करता है, ऐसे ही साधक भी प्राणिमात्र के हृदय में प्रविष्ट होकर उस ब्रह्म का अनुभव प्राप्त करें। किसी के हृदय में निवास करना हो तो उसके साथ सच्चा प्रेम और उसकी सदा सहायता करनी चाहिये।

''अग्निहोत्र'' (एक अध्ययन) 50 प्रतिशत छूट में प्राप्त करें

अग्निहोत्र एक अध्ययन पुस्तक डॉ. धमेन्द्र कुमार शास्त्री द्वारा लिखित महत्वपूर्ण पुस्तक हैं। डॉ. धर्मेन्द्र कुमार शास्त्री दिल्ली संस्कृत अकादमी के सचिव रह चुके है। वर्तमान में वे एसोसिएट प्रौफेसर (संस्कृत) एस. जी. ए. डी. खालसा कालेज, दिल्ली विश्वविद्यालय में कार्यरत हैं। उन्होंने अनेकों पुस्तकों का प्रणनयन किया है साथ ही देश-विदेशों में सैकड़ो सैमिनारों, सम्मेलनों में भाग लेकर शोध-पत्र प्रस्तुत किये है। लेखक ने अग्निहोत्र एक अध्ययन में यज्ञ के महत्व की वैज्ञानिक व्याख्या की है जो विद्वानों शोधकत्ताओं, समाजसुधारकों, पुस्तकालयों के लिए उपयोगी सिद्ध होगी। पुस्तक के प्रत्येक अध्याय में लेखक की वैज्ञानिक प्रतिबद्धता, सूक्ष्म विवेचन शैली, तार्किकता साफ झलकती है। पुस्तक में प्राचीन मान्यताओं के साथ-साथ वैज्ञानिक कसौटी पर अग्निहोत्र की उपयोगीता को कस कर अपने लेखन में हस्तसिद्ध हुए हैं। यह ग्रन्थ सब के लिए उपयोगी हैं। इसकी महत्ता को देखते हुए जन-सामान्य तक पहुँचाने के लिए लेखक ने पुस्तक पर 50% का मूल्य निर्धारित किया है। प्राप्ति स्थान-मूल्य 500, पृष्ठ-377

1. **वेदार्ष महाविद्यालय-119 गीता नगर, नई दिल्ली-49**
2. **सोमेन्द्र सिंह ए-17-5 जनकपुरी अजन्ता कालोनीगढ़ रोड़ में।**
   मो. 9410816724-9756747123
3. **हरीश शास्त्री-आर्य प्रतिनिधि सभा उ० प्र०, लखनऊ**
   मो. 9320622205

पृष्ठ 6 का शेष-अग्निहोत्र विषयक...

अन्तरिक्ष और द्यौ की प्रतीक है। वैसे तो ये ज्ञान, कर्म, उपासना, अग्नि वायु आदित्य, प्रकृति जीव ईश्वर ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ, एवं मन वचन कर्म की भी प्रतीक रूप में स्वीकार की जाती है।

ब्रह्मचारी आचार्य के पास तीन समिधाएँ लेकर जाता है। ये समिधाएँ शरीर, आत्मा एवं मन के प्रदीपन के लिए हैं पहली शरीर की निरोगता के लिए, दूसरी मन में श्रद्धा एवं शुचिता के लिए और तीसरी आत्म शुद्धि के लिए ब्रह्मचारी समिधा से समिद्ध (प्रदीप्त) होकर गुरुकुल से निकलता है ''ब्रह्मचर्येति समिधा समिद्ध'' (अथर्व 11.5.6) अर्थात् जैसे ये समिधाएँ अग्नि में प्रदीप्त होती है वैसे ही मैं तेज और ब्रह्मवर्चस से प्रदीप्त हो जाऊँ। इसी प्रकार याज्ञिक की भी यही भावना है कि जैसे ये समिधाएँ तीनों लोकों में प्रदीप्तता का प्रतीक हैं आदान करते हुए यही भावना हो ''अयं इद्धं आत्मा।''

आर्य समाज मोगा का 113 वां वार्षिकोत्सव सम्पन्न

आर्य समाज मोगा का 113वां वार्षिकोत्सव एवं वेद प्रचार सप्ताह दिनांक 20 नवम्बर से 26 नवम्बर 2017 तक बड़े ही हर्षोल्लास के साथ मनाया गया। इस अवसर पर आर्य जगत के प्रसिद्ध विद्वान आचार्य विष्णु मित्र वेदार्थी एवं सुमधुर भजनोपदेशक पंडित भीष्म आर्य के सातों दिन भजन एवं प्रवचन होते रहे जिसमें भारी संख्या में शहरवासी उपस्थित होकर सारगर्भित वेदोपदेश सुनते रहे। इस अवसर पर वैदिक विद्वान आचार्य विष्णु मित्र वेदार्थी ने ब्रह्मयज्ञ, देवयज्ञ, पितृयज्ञ, बलिवैश्वदेव यज्ञ व अतिथि यज्ञ नामक पांच महायज्ञ पर प्रकाश डालते हुये कहा कि यही पांच यज्ञ जीवन व परलोक में स्वर्ग प्रदान करने वाले होते हैं। स्वर्ग की व्याख्या करते हुये उन्होंने कहा कि जो जीव को सुख और सुख को दिलाने वाले साधन विद्या, धन, वैभव आदि पदार्थ होते हैं उन्हें स्वर्ग कहते हैं। उन्होंने पांच महायज्ञों का व्याख्यान करते हुये कहा कि नियमित रूप से संध्या, योगाभ्यास, व स्वाध्याय करना ब्रह्मयज्ञ है और इसी प्रकार प्रतिदिन योगाभ्यास करने से उपासक उन्नति करते हुये मोक्ष तक पहुंच जाता है। दूसरे यज्ञ में विद्वानों की सेवा व अग्निहोत्र को करना देवयज्ञ कहलाता है। तीसरे यज्ञ में जीवित पितरों की कृतज्ञतापूर्वक सेवा करते हुये उनके सदगुणों को धारण करना पितृयज्ञ के नाम से जाना जाता है। अपने पितरों की सेवा न करने वाले मनुष्य को कृतघ्नता का दोष लगता है इसलिये जीते जी पितरों की श्रद्धाभक्ति से सेवा करनी चाहिये। चौथे नित्य कर्म में रसोई में जो भोजन बनाया जाता है उसे स्वयं खाने से पहले उस भोजन के क्षार व लवणयुक्त भाग को छोड़ कर शेष भोजन में से रसोई की अग्नि में कुछ आहूतियां देकर तथा गौ आदि पशु व पक्षी आदि प्राणियों को खिलाने से प्राणियों का जो उपकार किया जाता है उस उपकार के करने को बलि वैश्व देव यज्ञ कहते हैं और धार्मिक व विद्वान अतिथियों की श्रद्धापूर्वक सेवा करते हुये उनसे परमार्थ की शिक्षा प्राप्त करना पांचवां कर्म अतिथि यज्ञ है। स्वर्ग की कामना करने वाले मनुष्यों को धर्म युक्त इन पांच कर्मों को प्रतिदिन करना चाहिये। श्रीमती इन्दु पुरी जी ने ओ३म पताका फहरा कर वेद प्रचार कार्यक्रम का शुभारम्भ किया। स्वस्ति याग एवं चतुर्वेद शतकम के पूर्णाहूति पर श्री अरविन्द घई प्रधान आर्य समाज माडल टाउन जालन्धर एवं उनकी धर्मपत्नी श्रीमती रश्मि घई मुख्यातिथि के रूप में सुशोभित रहे। इसके साथ ही आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के अधिष्ठाता साहित्य विभाग श्री सुरेन्द्र मोहन तेजपाल एवं सभा मंत्री श्री विनोद भारद्वाज सम्मानित अतिथि रहे। तीनों विभूतियों ने कार्यक्रम को सम्बोधित करते हुये आर्य जनों को प्रेरित किया। इस अवसर पर फाजिल्का से आर्य समाज के विद्वान श्री सुशील वर्मा जी का सम्मान किया गया। इसके पश्चात मोगा की समस्त आर्य शिक्षण संस्थाओं के छात्रों के भजन, भाषण एवं महर्षि दयानन्द जी सरस्वती के जीवन पर नाटिका की प्रस्तुति सभी के लिये प्रेरक रही। कार्यक्रम के अन्त में सभी ने ऋषि लंगर में प्रेमपूर्वक भोजन ग्रहण किया। इस अवसर पर श्री नरेन्द्र सूद, दिवाकर भारती, पुरूषोत्तम गोयल, सत्य प्रकाश उप्पल, अमित बेरी, जे.के.सिंगला, जितेन्द्र गोयल, अनिल गोयल, प्रवीण सिंगला, हेमन्त सूद, प्रियतम देव, इन्द्र सूद एवं अन्य आर्य जनों का उल्लेखनीय योगदान रहा।

आर्य समाज मोगा के 113वें वार्षिकोत्सव पर विशेष रूप से पधारे आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की तरफ से अधिष्ठाता साहित्य विभाग श्री सुरेन्द्र मोहन तेजपाल, सभा मंत्री श्री विनोद भारद्वाज एवं आर्य समाज माडल टाउन जालन्धर के प्रधान श्री अरविन्द घई जी, श्री सुरेश शास्त्री जी।

पुरुषोत्तम गोयल मंत्री आर्य समाज मोगा

आर्य समाज भार्गव नगर में लाला गंगाराम जी का जन्म दिवस मनाया गया

आर्य समाज भार्गव नगर जालन्धर में त्यागमूर्ति लाला गंगाराम जी एडवोकेट का जन्मदिवस गत वर्षो की भांति इस वर्ष भी 8 नवम्बर से 12 नवम्बर 2017 तक बड़ी धूमधाम से मनाया गया। इस कार्यक्रम में वेद कथा श्री सुरेश शास्त्री व भजन श्री सुरेन्द्र सिंह गुलशन एवं स्त्री आर्य समाज भार्गव नगर की भजन मण्डली द्वारा होते रहे। दिनांक 12 नवम्बर 2017 को मुख्य कार्यक्रम हवन यज्ञ के साथ शुरू हुआ जिसे पं. मनोहर लाल जी और श्री सुरेश शास्त्री जी द्वारा बहुत ही सुन्दर ढंग से सम्पन्न किया गया।

यज्ञ के पश्चात पधारे हुये यजमानों को आशीर्वाद दिया गया तथा प्रसाद वितरण किया गया। यज्ञ के पश्चात आर्य समाज के संरक्षक श्री कमल किशोर आर्य जी की अध्यक्षता में सम्मेलन का शुभारम्भ हुआ। सर्वप्रथम स्त्री आर्य समाज भार्गव नगर की भजन मण्डली द्वारा भजन प्रस्तुत किए गए तथा उसके बाद श्री सुरेन्द्र सिंह गुलशन द्वारा बहुत सुन्दर भजन गाए गए जिसका सभी श्रोताओं ने भरपूर आनन्द उठाया। इस सम्मेलन में सांसद श्री संतोख चौधरी, श्री सरदारी लाल आर्य वरिष्ठ उपप्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब, श्री सुदेश रत्न मन्त्री आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब, श्री मोहिन्द्र भगत वरिष्ठ नेता बी.जे.पी., श्री सुरेश शास्त्री ने अपने-अपने विचार प्रस्तुत किए। विशेष तौर पर लाला गंगाराम स्कूल के बच्चों ने आर्य समाज के सिद्धान्तों पर कार्यक्रम प्रस्तुत किया। इस अवसर पर नवांशहर में हुए आर्य महासम्मेलन में सहयोग देने के लिए सभी आर्य समाजों को सम्मानित किया गया।

आर्य समाज वेद मंदिर भार्गव नगर जालन्धर द्वारा लाला गंगाराम दिवस मनाया गया। इस अवसर पर सभा उप प्रधान श्री सरदारी लाल जी सभा कोषाध्यक्ष श्री सुधीर शर्मा जी को सम्मानित करते हुये। उनके साथ खड़े हैं आर्य समाज के प्रधान श्री राज कुमार तथा सभा कार्यालयाध्यक्ष श्री जोगिन्द्र सिंह।

इस अवसर पर आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के कोषाध्यक्ष श्री सुधीर शर्मा जी मुख्य अतिथि के रूप में पधारे व उनके साथ श्री जोगिन्द्र सिंह सभा कार्यालयाध्यक्ष भी उपस्थित हुए। सारा कार्यक्रम बहुत ही सुन्दर ढंग से सम्पन्न हुआ। मंच का संचालन आर्य समाज भार्गव नगर के मन्त्री श्री बिशम्बर कुमार ने किया। आर्य समाज के प्रधान श्री राज कुमार जी ने आए हुए सभी अतिथियों को धन्यवाद किया। शांतिपाठ के साथ कार्यक्रम का समापन हुआ तथा सभी आए हुए आर्यजनों ने ऋषि लंगर ग्रहण किया।

बिशम्बर कुमार
मन्त्री आर्य समाज भार्गव नगर

श्री प्रेम भारद्वाज महामन्त्री, सम्पादक, प्रकाशक, मुद्रक द्वारा गायत्री प्रिंटिंग प्रैस, मण्डी रोड जालन्धर से मुद्रित होकर आर्य मर्यादा कार्यालय, गुरुदत्त भवन, चौक किशनपुरा, जालन्धर से इसकी स्वामिनी आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के लिए प्रकाशित हुआ। E-mail: apspunjab2010@gmail.com, www.aryapratinidhisabha.org
आर्य मर्यादा में प्रकाशित सारी लेखन सामग्री से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं। प्रत्येक विवाद के लिए न्याय क्षेत्र जालन्धर होगा।